एक अधूरी प्रेमकथा

इला प्रसाद

हिन्दी ADDA

एक अधूरी प्रेमकथा

मन घूमता है बार-बार उन्हीं खंडहर हो गए मकानों में, रोता-तड़पता, शिकायतें करता, सूने-टूटे कोनों में ठहरता, पैबंद लगाने की कोशिशें करता... मैं टुकड़ा-टुकड़ा जोड़ती हूँ लेकिन कोई ताजमहल नहीं बनता!

ये पंक्तियाँ मेरी नहीं, निमिषा की हैं। मैने जब पहली बार उसकी डायरी के पन्ने पर ये पंक्तियाँ पढ़ीं तो चकित रह गई थी। यह लड़की इतना सुंदर लिख सकती है! उसका उत्साह और बढ़ा था, उसने कुछ और पन्ने चुन-चुन कर मुझे पढ़ाए थे।

हम तो डूबने चले थे मगर

सागरों में ही अब गहराइयाँ नहीं रहीं!

'कैसे लिख लेती हो तुम ऐसा?' मैने प्रशंसा की थी। उसने कुछ शरमा कर अपनी डायरी बंद कर दी थी। लेकिन तब मैं बिल्कुल नहीं सोच पाई थी कि किस संदर्भ में ये पंक्तियाँ उसके मन में उपजी होंगी! किसी से प्रेम किया होगा और क्या! ऐसा ही तो हम सोच लेते हैं न! तब एक पूरा समय-चक्र बाकी था जो मुझसे उसकी पहचान कराता।

जब मैं हॉस्टल में उसकी रूममेट बनकर उसके कमरे में आई तो शुरू-शुरू में बस इतना ही जान पाई थी कि वह अपनी माँ से बेहद प्यार करती है। अपनी टेबल पर उसने माँ की तस्वीर सजा रखी थी जिसमें वह अपनी माँ के बराबर में खड़ी हँस रही थी। उसकी शकल अपनी माँ से बेहद मिलती थी। माँ की ही तरह सुंदर थी वो!

वह अपनी माँ से किस हद तक जुड़ी थी और अपने पिता से कितनी नफरत रखती थी यह मैंने तब जाना जब उसने एक रात अपना अलबम मुझे दिखाया। अजीब बात थी! उसके अलबम में उसके पिता का एक भी चित्र नहीं था। बस माँ और वह! छोटी-सी निमी माँ की गोद में, खेलती निमी माँ के पास बैठी, माँ के साथ किसी पिकनिट स्पाट पर, यात्रा में, कहीं भी। बस माँ हर जगह, पिता अनुपस्थित। लेकिन वह पिता की बातें करती थी! पिता बहुत बड़ी कंपनी में मैनेजर हैं। वह उनके साथ रही थी, दो बरस पहले। माँ की मौत के बाद पापा साथ ही लिवा ले गए थे, हालाँकि वह बिल्कुल नहीं चाहती थी। वह उनसे मिलने गई थी, पिछली छुट्टियों में। इसी तरह की तमाम बातें वह करती। मैंने अनुमान लगाया कि शायद ऐसा इसलिए है कि इसकी माँ अब दुनिया में नहीं हैं या पिता से उनका शायद डाइवोर्स हो चुका होगा। पूछने का साहस नहीं हुआ। यूँ भी मैं उसे पूरा समय देना चाहती थी कि वह कभी अगर खुद चाहे तो मुझे बतलाए, जैसे उस दिन उसने मुझे अपना अलबम दिखाया था, डायरी के कुछ पन्ने पढ़ाए थे।

प्यारी-सी लड़की थी वह। कपड़ों से लेकर कमरे के रख-रखाव तक में उसके सौंदर्य बोध की स्पष्ट छाप थी। वह क्यों बॉटनी में शोध कर रही थी, पता नहीं। वह पूर्णतः कलाकार थी। पेंटिंग करना, कविता लिखना, अपने कपड़े खुद डिजाइन करना और शहर में मामा के घर जाकर मशीन पर सिलना, उन पर कढ़ाई करना, यह सब उसकी आदतों में शुमार था। रंगों का चयन भी अद्भुत। व्यक्तित्व में एक गरिमा। चाल में आत्मविश्वास। यह आत्मविश्वास शायद उसके अमीर होने की वजह से है, मैं सोचती

और उससे दूरी बनाए रहती। हॉस्टल में कई लड़कियाँ उसकी जबर्दस्त फैन थीं। एक ने उस पर कविता भी लिख डाली थी। सारे वक्त उसका हँसता चेहरा किसी को भी दोस्त बना लेता था। और फिर साहित्य में रुचि। इसी रुचि ने उसे सेंट्रल लाइबेरी में बंटू से मिलवाया था, जब एक दिन विभाग से लौटने के बाद उसने मुझसे अपेक्षा की थी कि मैं उसके दोस्त से मिलूँ।

'राका दी, आप बंटू से मिलेंगी? वह मेरा दोस्त है। मेरी-आपकी तरह साहित्यिक रुचि है उसकी। हम किताबें पढ़ते हैं और फिर उन पर चर्चा करते हैं।'

'अच्छी बात है। लेकिन मैं क्यों मिलूँ? मुझे तुम्हारे दोस्तों से दोस्ती करने में कोई दिलचस्पी नहीं।'

'क्या है दीदी! जरा सा नीचे चल नहीं सकतीं? एक फ्लोर ही तो है। सीढ़ियों के नीचे वह खड़ा है।'

मैं अनिच्छा से उठी। कमरे में आने के बाद फिर नीचे जाने का मतलब कपड़े बदलना। जाने किस-किस के मित्र, अभिभावक हॉस्टल के बरामदे या मैदान में होते हैं और हॉस्टल का नियम भी है कि हम फार्मल ड्रेस में नजर आएँ।

नीचे वह खड़ा था। मँझोले कद का, दुबला-पतला लड़का। बड़ी-बड़ी आँखें जो जाने क्यों मुझसे नजर नहीं मिला रही थीं। अतिरिक्त संकोच और लड़कों में? नहीं, यह उसका निमिषा के प्रति आकर्षण है और पकड़े जाने का डर - जो उसे नजरें उठाने नहीं दे रहा। मैंने सोचा और वहाँ से हट जाना उचित समझा।

मैने औपचारिक परिचय किया और कमरे में वापस आ गई। निमी लौटी, घंटे भर बाद। चहकती हुई, हमेशा की तरह।

'दीदी, बंटू अच्छा है न? आपको कैसा लगा?'

मैं हँसी - 'क्या मतलब?'

'आपको नहीं लगा कि वह बहुत अच्छा लड़का है?'

इच्छा हुई कहूँ, 'प्यार हो, तो साधारण चेहरा भी सुंदर हो जाता है, असाधारण लगता है। यह तुम्हारा आकर्षण है निमी, जो उसे हैंडसम बना रहा है।' किंतु चुप रही, मैं निमी के मामलों में दखल नहीं देती थी। उससे एक निश्चित दूरी बना रखी थी मैंने क्योंकि

उस कमरे में आए हुए मेरे बस तीन महीने हुए थे और इतना वक्त उस लड़की को जानने के लिए काफी नहीं था।

फिर यह अक्सर ही होता, कभी विभाग जाने से पहले, कभी विश्वविद्यालय से लौटते हुए रास्ते में और कभी हॉस्टल के ही लान में मुझे वे दोनों मिलते - बातें करते हुए। मैं हाथ हिलाकर आगे बढ़ जाती। शायद उनके निरीक्षण का पूरा मौका वक्त मुझे थमा रहा था और मुझे बंटू में कम और निमिषा में दिलचस्पी ज्यादा थी।

हम दिन भर अपने अपने विभाग में होते, शाम अलग अलग कटती किंतु रात तो साथ ही गुजरती थी। हमारे सोने का समय एक था और खाने का भी। हॉस्टल के मेस में भी हम साथ ही होते। वह चहकती रहती, खिलखिलाती रहती। मेस में जैसे जान आ जाती उसकी हँसी और बातों से और मैं सोचती कितना सुंदर होता है प्रेम!

शायद मुझे भी उससे स्नेह होता जा रहा था तभी मैं उसकी कहानियाँ सुनने लगी थी। मन्नू भंडारी से लेकर तुर्गनेव तक की किताबों पर चर्चा करने लगी थी और नाम सुझाने लगी थी कि अगली कौन-सी किताब उसे पढ़नी चाहिए। वह मेरी सलाह गंभीरता से सुनती। मुझे बड़ों का सम्मान देती लेकिन जब वह बंटू की बातें करती तो मैं चुप ही रहती थी।

यह प्यार का पहला सोपान था।

लाइब्रेरी से किताबें लाना, पढ़ना और फिर एक-दूसरे को पढ़ाना यानी कि बंटू से मिलते रहना। लंबे वार्तालापों का सिलसिला। पचपन खंभे लाल दीवारें, गान विद द विंड, फर्स्ट लव, अंधे मोड़ से आगे, गुनाहों का देवता, सारा आकाश... उसके सप्ताहांत अब बंटू के लिए थे। वह उससे बातें करके कमरे में लौटती और शुरू हो जाती -

'जानती हैं राका दी, हमारी रुचियाँ बेहद मिलती हैं! कल मैंने पीला सलवार सूट पहना था तो उसने बताया पीला उसका भी फेवरेट कलर है।'

...

'बंटू को भी छोले-भटूरे पसंद हैं।'

...

'बंटू के दादा जी स्वतंत्रता सेनानी थे। बनारस की वो गली उसके दादा जी के नाम पर है। बहुत संपन्न लोग हैं वे। लेकिन तब भी देखिए, जरा भी घमंडी नहीं है। है न?'

...

'बंटू को भी राक म्यूजिक पसंद है। वह शिवकुमार शर्मा और हरि प्रसाद चौरसिया को भी सुनता है। आज यह कैसेट उसने मुझे दिया। बजाऊँ?'

...

'कल हमने जे कृष्णमूर्ति को पढ़ा। हम कृष्णमूर्ति फाउंडेशन, राज घाट जाने वाले हैं।'

'सारनाथ नहीं? बुद्ध अच्छे नहीं लगते? वैराग्य हो जाएगा?' मैंने चिढ़ाया।

'आप भी न राका दी!' ...उसका मुँह फूल गया।

बंटू सारा आकाश था और वह उड़ रही थी। मैं उसे देखती और सोचती - कहाँ जा रही है यह लड़की!

प्रेम का दूसरा सोपान

वह अब गंभीर होती जा रही थी। अंतर्मुखी, आत्मलीन-सी। मैं समझ रही थी, बंटू को लेकर एक सपना पाल लिया है इसने। मुझे वह लड़का बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था। बेहद भावुक किस्म का दिखता था वह। फैसले लेने और उन पर टिकने का माद्दा रखने वाले कुछ और होते हैं। मैं लड़कों से कभी मित्रता न करने के बावजूद उनके हाव-भाव से इतना तो समझ ही सकती थी।

वह अकारण स्नेह लुटाती रहती। सब पर। अब भी। रविवार को यदि कमरे में होती तो खाना वही पकाती यदि मेस आफ होता। 'आप बैठिए, मैं पकाऊँगी। मैं छोटी हूँ न। आपकी छोटी बहन।'

लेकिन बंटू की बातें करने के बजाय, मुझसे बचने की कोशिश करती। कमरे में जब हम दोनों होते और सामान्य वार्तालाप चल रहा होता तो वह जान बूझ कर बंटू-प्रसंग वार्तालाप से बाहर रखती। मैं चाहती कि वह खुले लेकिन वह जाने किन समस्याओं से जूझ रही थी और अपनी ही दुनिया में गुम थी! मेरी चिंता उसे लेकर बढ़ती जा रही थी!

तीसरा सोपान

वंदना मुझे पंडित जी की चाय की दुकान पर मिली - निमी की बचपन की सहेली और सबसे अच्छी दोस्त। बदहवास।

'राका दी, आपको कब से ढूँढ़ रही हूँ! आपके विभाग में लोगों ने बतलाया कि आप यहाँ हैं!'

मैंने चाय का एक प्याला उसकी तरफ बढ़ाया - 'लेकिन क्यों? क्यों ढूँढ़ रही थी मुझे?'

'आप हॉस्टल चलिए। निमिषा ने नींद की गोलियाँ खाकर आत्महत्या करने की कोशिश की।'

'व्हाट नानसेन्स! किसने कहा तुम्हें?'

'मैंने उसे रोका, गोलियों की शीशी छीनी। वह कमरे में ही है। रो रही है!'

'तुम हॉस्टल गई थी?' मेरी आवाज में अभी भी अविश्वास था।

'हाँ, आप चलिए तो!'

हम दोनों ने अपनी-अपनी साइकिल उठाई। मैने पंडित जी के पैसे चुकाए और साथ-साथ पैदल चलने लगे। अब उसे भी कोई हड़बड़ी नहीं थी। हम बातें कर सकते थे। वह यही चाहती भी थी कि मैं पूछूँ और वह बतलाए।

'निमी ने ऐसा क्यों किया, कुछ बतलाया?'

'बतलाना क्या। मैं तो डर ही रही थी कि वह ऐसा-वैसा कुछ कर न डाले। इसीलिए तो आज हॉस्टल गई थी।'

'तुम्हे पता था?'

'वह और बंटू शादी करना चाहते हैं न। कल उसने बतलाया था कि वह बंटू को अपने बारे में सबकुछ बतला देना चाहती है। जब वह सामने होता है तो बोल नहीं पाती। बोल कर बतलाना यूँ भी मुश्किल है इसलिए उसने उसे सबकुछ लिख कर दिया है। वह जानती है कि उसके जन्म की कहानी जान लेने के बाद वह उससे कभी शादी नहीं करेगा। बहुत रो रही थी कल।'

'अच्छा।'

'आज सुबह जब मैं गई तो हॉस्टल गेट से बंटू निकल रहा था। उसने मुझे देखा भी नहीं। नहीं तो हमेशा नमस्ते तो कर लेता था। मुझे लगा, कुछ गड़बड़ है। आपके कमरे में पहुँची तो...'

मैने उसे बीच में रोका - 'तो क्या बतलाया उसने?'

'बंटू आज सुबह उसे यह बतलाने आया था कि वह अब भी उससे शादी करना चाहता है लेकिन घर में तूफान खड़ा हो गया है। वह उससे मैत्री रखेगा लेकिन शादी किसी और से करेगा। हालाँकि उसकी निमी से मैत्री को लेकर भी उसके घर में अब सबों को आपत्ति है।'

'लेकिन निमी में ऐसा क्या है? उसके पेरेंट्स का डाइवोर्स हुआ है, यही न?'

'उसने आपको ऐसा कहा है?'

'नहीं, मुझे ऐसा लगता है। जिस तरह से वह अपनी माँ की बातें करती है और पापा से दूर रहती है। मैंने सोचा उनका तलाक हुआ होगा।'

'शादी ही नहीं हुई।'

'क्या मतलब?' मैं चौंक गई।

'हाँ राका दी, उसके माँ-पापा की आपस में शादी नहीं हुई थी। निमी के पापा तब गाजीपुर में सीमेंट कंपनी में मैनेजर थे। निमी के मामा उसी कंपनी में काम करते थे। कुछ गलत किया था कि नौकरी चली गई। उनकी शादी हो चुकी थी। बच्चे थे। निमी की माँ तब अविवाहित थीं। स्कूल में पढ़ाती थीं। सुंदर थीं, युवा थीं। अपनी पुनः बहाली के लिए भाई ने मैनेजर का बहन से परिचय करा दिया।'

'उन्हें फिर से नौकरी मिल गई?'

'नहीं। निमी के पापा का जल्द ही ट्रांसफर हो गया। लेकिन निमी के पापा और ममी आपस में मिलते रहे। दूसरे शहर में भी। भाई के परिवार का खर्च निमी की माँ ही चलाती थीं इसलिए गाजीपुर की नौकरी छोड़ नहीं सकती थीं। लेकिन उनके संबंध बने रहे।'

'और निमी आ गई!'

'हाँ!'

'तो शादी क्यों नहीं की?'

'निमी के पापा पहले से शादीशुदा थे। उनके बड़े-बड़े बच्चे हैं। उनकी पत्नी को जब पता चल गया तो उन्होंने निमी को तो स्वीकार लिया लेकिन कसम दिलवा कर उसके पापा-मम्मी के संबंध खत्म करवा दिए। निमी की माँ को उस घर में कोई जगह नहीं मिली। कभी भी नहीं।'

'मुझे निमी ने एक बार कहा था, "मैं पापा को कभी माफ नहीं कर सकती। माँ आखिरी समय में पापा को देखना चाहती थीं। मैने खबर भेजी थी। लेकिन वे ट्रेन से आए, प्लेन से नहीं। माँ की आखिरी इच्छा भी उन्होंने नहीं रखी। माँ उन्हें बिना मिले ही चली गईं। वो चाहते तो आ सकते थे!" '

'आखिरी दिनों में उनके संबंध पूरी तरह खत्म हो गए थे।'

'वह टेंथ क्लास में थी न, जब उसकी माँ की मृत्यु हुई? उसने बतलाया था। उन्हें कैंसर था। अभी उसके खर्चे कौन देता है?'

'उसकी माँ सारी संपत्ति उसके नाम छोड़ गईं है न। उसके पास एक मकान है और बैंक बैलेंस। वह पापा से कुछ नहीं लेती। बस मिल लेती है, कभी-कभी। उस घर में अपने भाइयों से भी। उसके पापा के एक बेटे की तो शादी भी हो चुकी है।'

'हूँ। लेकिन वह काफी खुश मिजाज है। कोई सोच भी नहीं सकता...'

'आप भी राका दी... खुशमिजाज है वह? नाटक करती है। कहती है, मैं जानती हूँ मुझे जिंदगी में कुछ नहीं मिलनेवाला। मेरे हिस्से में बस रेत ही रेत आई है। आएगी। मैं रेत को मुट्टियों में भरती हूँ। पलों में जीती हूँ। पलों में मिली खुशी समेटती हूँ और मस्त रहती हूँ। अंदर-अंदर रोती हूँ, ऊपर-ऊपर हँसती हूँ। कौन झेलेगा मेरा रोना! मुझे तो अकेले ही रहना है।'

'किसे मिलती है जिंदगी भर की खुशी? कोई न कोई अभाव सबके जीवन में होता है।'

'लेकिन उसका अभाव बहुत गहरा है। माँ-बाप के रिश्ते को कोई नाम न दे पाने का एहसास उसे छीलता रहता है। इसीलिए वह इतना हँसती है, घूमती है, लड़कों से फ्लर्ट करती है।'

'बंटू से तो फ्लर्ट नहीं कर रही थी।'

'बहुत भावुक है उसे लेकर। इसीलिए तो मरने जा रही थी।'

हॉस्टल सामने था। मैने वंदना से कहा वह वापस जाए। मैं अकेले कमरे में जाउँगी। 'मैने उसे कह दिया था कि आज मैं राका दी को सब बता दूँगी।' इतना कहकर वंदना चली गई।

दुपहर हो रही थी जब मैं हॉस्टल में घुसी।

यह प्रेम का आखिरी पायदान है, मैंने सोचा। क्लाइमेक्स!

प्रेम के आखिरी सोपान पर

कमरे का दरवाजा उढ़का हुआ था। अगल-बगल के सारे कमरों के दरवाजे पर ताले लटक रहे थे। दोपहर के भोजन में अभी देर थी। मैं चुपचाप अंदर घुसी। वह बिस्तर पर मुँह के बल लेटी थी। दुबली-पतली काया। गोरे चेहरे पर बिखरे हुए उसके कटे हुए छोटे बाल। रुलाई को घोंटने की कोशिश में रह-रहकर काँपता उसका पूरा शरीर...

मैंने उसे देखा और फट पड़ी -

'मरना ही है तो कहीं और जाकर मरो। मुझे क्यों हथकड़ियाँ लगवाना चाहती हो? गाजीपुर जाकर मरो। मामा के घर में। पापा के पास। हॉस्टल का कमरा ही मिला था? क्या बिगाड़ा है मैंने तुम्हारा? किस बात का बदला ले रही हो? एक तुम्हारे होने न होने से इस इतनी बड़ी दुनिया में कोई अंतर नहीं पड़ने वाला। शौक से मरो। अपनी मर्जी से आई थी न दुनिया में, अपनी मर्जी से जाओगी!'

फिर मैने चौंक कर महसूसा कि ऐसा कुछ तो मैंने नहीं सोचा था। कमरे में घुसने के पहले मेरे मन में कुछ भी स्पष्ट नहीं था। कैसा व्यवहार करना है इसकी कोई निश्चित रूपरेखा नहीं थी। क्या कर रही हूँ मैं? क्या कह रही हूँ? लेकिन मैं क्या कहना चाहती हूँ, मुझे खुद भी नहीं मालूम था। मुझे उस पर बेहद गुस्सा आ रहा था। वह गुस्सा इसलिए नहीं था कि उसने उस कमरे में यह कोशिश की थी। वह कहीं और जाकर मरती तो क्या मैं निर्लिप्त रहती? मैंने खुद से पूछा।

मैं न तो अपने गुस्से को पहचान पा रही थी न उस वक्त किसी आत्म-विश्लेषण के लिए तैयार थी। मैं बस उस पर बरस रही थी। जो जी में आए कहे जा रही थी। उसका रोना तेज होता जा रहा था। अब वह फूट-फूट कर रो रही थी। आवाज भींच कर। उसने सुबह से कुछ खाया नहीं था। वंदना ने बतलाया था। वह नहाई नहीं थी। अनवरत रोने से सूजी हुई आँखें और दुबला चेहरा लिए वह मासूम बच्ची-सी लग रही थी, अपनी उम्र से बहुत छोटी।

मैंने उसे बहुत प्यार किया था। छोटी बहन थी वह मेरी। अनचाहे ही मैं शायद बहुत गहरे जुड़ गई थी उससे। यह जुड़ना बहुत समय से हो रहा था, मैने आज पहचाना था।

वह सहसा उठ कर बैठ गई। दीवार से पीठ टिका ली। तकिया गोद में। आँखें झुकीं। मुँह से पहली बार बोल फूटे -

'माँ के मरने के बाद बहुत अकेली हो गई थी मैं। कोई मुझे डाँटता नहीं था। मैं जान-बूझकर गलतियाँ करती, तब भी... कोई डाँटता नहीं था। आज पहली बार किसी ने मुझे इतना डाँटा है। थैंक्यू दीदी!'

मैं स्तब्ध थी।